International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly

ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 0.899
Vol. 4 No.1 Sept - Oct 2016

प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों की परंपरा: एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अध्ययन

डॉ. रवीन्द्र कुमार सिंह

पी.जी.टी. – (इतिहास)

आर. एन. सीनियर सेकेंडरी स्कूल, जाखिम औरंगाबाद (बिहार)

सारांश:

प्राचीन भारतीय समाज अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, कलात्मक उत्कृष्टता तथा सामाजिक विविधताओं के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध रहा है। भारतीय सभ्यता में अलंकारों का स्थान केवल सौंदर्य-वर्धन तक सीमित नहीं था, बल्कि वे सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक समृद्धि, धार्मिक आस्था तथा सांस्कृतिक पहचान के महत्वपूर्ण प्रतीक भी थे। प्राचीन काल में स्त्री और पुरुष दोनों ही विभिन्न प्रकार के आभूषणों एवं अलंकारों का उपयोग करते थे। इन अलंकारों का उल्लेख वैदिक साहित्य, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, पुराणों तथा विभिन्न अभिलेखों में प्राप्त होता है। सिंधु घाटी सभ्यता से प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेष भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि भारतीय समाज में अलंकरण की परंपरा अत्यंत प्राचीन और विकसित थी। स्वर्ण, रजत, ताम्र, कांस्य, मोती, मणि तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित आभूषण तत्कालीन समाज की आर्थिक स्थिति, कलात्मक कौशल तथा सांस्कृतिक चेतना को प्रतिबिंबित करते थे।[1]

प्राचीन भारत में अलंकार केवल व्यक्तिगत श्रृंगार की वस्तुएँ नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक वर्ग, वैवाहिक स्थिति, धार्मिक विश्वास तथा राजनीतिक शक्ति के भी प्रतीक थे। राजपरिवारों, अभिजात वर्गों तथा सामान्य जनता द्वारा प्रयुक्त अलंकारों में स्पष्ट भिन्नता दिखाई देती थी। विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय संस्कृति और परंपराओं के अनुसार अलंकारों के स्वरूप तथा निर्माण शैली में भी विविधता देखने को मिलती है। प्रस्तुत शोध आलेख में प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों की परंपरा, उनके ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक महत्व तथा सामाजिक उपयोगिता का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

प्रमुख शब्द : प्राचीन भारत, अलंकार, आभूषण, सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक जीवन, स्वर्णाभूषण, भारतीय कला, श्रृंगार परंपरा।

प्रस्तावना:

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध संस्कृतियों में से एक है, जिसमें कला, साहित्य, धर्म, दर्शन और सामाजिक परंपराओं का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। इन्हीं परंपराओं में अलंकारों और आभूषणों की परंपरा का विशेष स्थान रहा है। मानव सभ्यता के प्रारंभिक विकास के साथ ही सौंदर्यबोध और आत्म-अभिव्यक्ति की भावना विकसित हुई, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के अलंकारों का निर्माण और उपयोग आरंभ हुआ। प्राचीन भारतीय समाज में अलंकार केवल शारीरिक सौंदर्य बढ़ाने का साधन नहीं थे, बल्कि वे व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक स्थिति, धार्मिक आस्था तथा सांस्कृतिक पहचान के महत्वपूर्ण सूचक भी थे।

सिंधु घाटी सभ्यता के मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त आभूषणों, मनकों, कंगनों तथा धातु-निर्मित अलंकारों से स्पष्ट होता है कि भारतीय उपमहाद्वीप में अलंकरण की परंपरा लगभग पाँच हजार वर्ष पुरानी है। वैदिक साहित्य में भी स्वर्णाभूषणों, कर्णफूलों, हारों तथा अन्य आभूषणों का उल्लेख मिलता है। रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों में राजाओं, रानियों और देवताओं के अलंकारों का विस्तृत वर्णन मिलता है, जो तत्कालीन समाज में आभूषणों के महत्व को दर्शाता है।

मौर्य, शुंग, कुषाण तथा गुप्त काल में भारतीय शिल्पकला और आभूषण निर्माण कला ने उल्लेखनीय प्रगति की। इस काल की मूर्तियों, स्तूपों तथा चित्रकलाओं में विभिन्न प्रकार के अलंकारों का अत्यंत सुंदर चित्रण मिलता है। अजंता और एलोरा की गुफाओं, सांची स्तूप तथा भरहुत की मूर्तियों में अंकित आभूषण तत्कालीन समाज की कलात्मक समृद्धि और सौंदर्यबोध का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का महत्व केवल श्रृंगार तक सीमित नहीं था। वे धार्मिक अनुष्ठानों, विवाह संस्कारों, उत्सवों तथा सामाजिक आयोजनों का अभिन्न अंग थे। महिलाओं के लिए आभूषण सौभाग्य, सम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रतीक माने जाते थे, जबकि पुरुषों के लिए वे शक्ति, वीरता और उच्च सामाजिक स्तर के परिचायक थे। राजाओं और शासकों द्वारा धारण किए जाने वाले मुकुट, बाजूबंद तथा रत्नजड़ित आभूषण उनके अधिकार और वैभव के प्रतीक थे।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों की परंपरा केवल सौंदर्य से संबंधित नहीं थी, बल्कि यह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक मान्यताओं तथा आर्थिक विकास से भी गहराई से जुड़ी हुई थी। अतः प्राचीन भारतीय अलंकारों का अध्ययन हमें तत्कालीन समाज के सांस्कृतिक और ऐतिहासिक स्वरूप को समझने में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान करता है।

प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित प्रमुख अलंकार:

कर्णाभूषण (कुंडल): कर्णाभूषण अथवा कुंडल प्राचीन भारतीय समाज के सर्वाधिक लोकप्रिय और प्राचीन अलंकारों में से एक थे। इनका उपयोग स्त्री एवं पुरुष दोनों द्वारा किया जाता था। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत तथा विभिन्न पुराणों में कुंडलों का उल्लेख प्राप्त होता है। प्राचीन काल में स्वर्ण, रजत, कांस्य, हाथीदांत, मोती तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित कुंडल विशेष रूप से प्रचलित थे। राजाओं, राजकुमारों तथा उच्च वर्ग के लोगों द्वारा रत्नजड़ित कुंडल धारण किए जाते थे, जबकि सामान्य वर्ग धातुओं अथवा अन्य उपलब्ध पदार्थों से निर्मित कर्णाभूषणों का उपयोग करता था।

कुंडल केवल सौंदर्य-वर्धन का साधन नहीं थे, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक सम्पन्नता के प्रतीक भी माने जाते थे। धार्मिक दृष्टि से भी इनका महत्व था। अनेक देवताओं और देवियों की मूर्तियों में भव्य कुंडलों का चित्रण मिलता है, जिससे इनके सांस्कृतिक महत्व का पता चलता है। सिंधु घाटी सभ्यता से प्राप्त मूर्तियों और पुरावशेषों में भी कर्णाभूषणों के प्रमाण मिलते हैं, जो इस परंपरा की प्राचीनता को सिद्ध करते हैं।[2]

हार एवं माला: हार और मालाएँ प्राचीन भारतीय श्रृंगार के सबसे महत्वपूर्ण अंगों में से थीं। इन्हें स्त्री एवं पुरुष दोनों धारण करते थे, यद्यपि महिलाओं में इनका प्रयोग अधिक व्यापक था। स्वर्ण, रजत, मोती, मणि, रत्न तथा पुष्पों से निर्मित हार सामाजिक प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य के प्रतीक माने जाते थे। वैदिक साहित्य में 'निष्क' और 'हिरण्यहार' जैसे स्वर्णहारों का उल्लेख मिलता है।

राजाओं, रानियों तथा अभिजात वर्ग के लोगों द्वारा बहुमूल्य रत्नों से जड़े हार धारण किए जाते थे। धार्मिक अनुष्ठानों और उत्सवों में पुष्पमालाओं का विशेष महत्व था। देव-प्रतिमाओं को भी विभिन्न प्रकार की मालाओं से अलंकृत किया जाता था। गुप्तकालीन मूर्तियों और अजंता की चित्रकला में अनेक प्रकार के हारों का सुंदर चित्रण मिलता है। हार न केवल सौंदर्य का प्रतीक थे, बल्कि वे व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, धार्मिक आस्था और आर्थिक समृद्धि का भी परिचय देते थे।[3]

बाजूबंद: बाजूबंद प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित एक महत्वपूर्ण अलंकार था, जिसे बाजुओं पर धारण किया जाता था। यह विशेष रूप से क्षत्रिय वर्ग, राजपरिवारों और योद्धाओं में लोकप्रिय था। बाजूबंद स्वर्ण, रजत तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित होते थे और अक्सर उन पर कलात्मक नक्काशी की जाती थी। इन्हें शक्ति, साहस, गौरव और वीरता का प्रतीक माना जाता था।

महिलाएँ भी विशेष अवसरों पर बाजूबंद धारण करती थीं। विवाह, धार्मिक अनुष्ठान तथा राजकीय समारोहों में इसका प्रयोग विशेष रूप से किया जाता था। भारतीय मूर्तिकला में देवी-देवताओं और राजपरिवारों के सदस्यों को बाजूबंद पहने हुए दर्शाया गया है। मौर्य और गुप्त काल की मूर्तियों में बाजूबंदों की कलात्मकता तत्कालीन शिल्पकला की उत्कृष्टता को दर्शाती है।

कंगन एवं चूड़ियाँ: कंगन और चूड़ियाँ प्राचीन भारतीय महिलाओं के सबसे लोकप्रिय आभूषणों में से थीं। सिंधु घाटी सभ्यता की खुदाइयों से प्राप्त मृण्मूर्तियों और अवशेषों में चूड़ियों के अनेक प्रमाण मिले हैं, जो इनके अत्यंत प्राचीन होने का संकेत देते हैं। चूड़ियाँ मिट्टी, शंख, हाथीदांत, कांच, तांबा, कांसा, चांदी और सोने जैसी विभिन्न सामग्रियों से बनाई जाती थीं।

भारतीय समाज में चूड़ियों का सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व भी था। विवाहित महिलाओं के लिए चूड़ियाँ सौभाग्य और वैवाहिक जीवन की प्रतीक मानी जाती थीं। विभिन्न क्षेत्रों में चूड़ियों के स्वरूप और शैली में भिन्नता देखने को मिलती थी। कंगन और चूड़ियाँ केवल श्रृंगार का साधन नहीं थीं, बल्कि वे सामाजिक पहचान और सांस्कृतिक परंपराओं की वाहक भी थीं।[4]

करधनी: करधनी, जिसे मेखला भी कहा जाता है, महिलाओं द्वारा कमर में धारण किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण अलंकार था। यह विशेष रूप से राजपरिवारों, संपन्न वर्गों तथा नृत्यांगनाओं में लोकप्रिय थी। करधनी स्वर्ण, रजत, मोती और रत्नों से निर्मित होती थी तथा इसकी बनावट अत्यंत कलात्मक होती थी।

प्राचीन साहित्य और मूर्तिकला में करधनी का उल्लेख बार-बार मिलता है। भरहुत, सांची और अजंता की मूर्तियों में महिलाओं को करधनी धारण किए हुए दर्शाया गया है। करधनी को स्त्री-सौंदर्य, सम्पन्नता और शिष्टता का प्रतीक माना जाता था। धार्मिक अवसरों, विवाह समारोहों तथा नृत्य प्रस्तुतियों में इसका विशेष महत्व था। करधनी का प्रयोग यह भी दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय समाज में अलंकरण कला कितनी विकसित और परिष्कृत थी।[5]

नूपुर (पायल): नूपुर अथवा पायल भारतीय महिलाओं के श्रृंगार का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग था। पैरों में धारण किए जाने वाले इस अलंकार का उल्लेख प्राचीन साहित्य, संस्कृत काव्यों तथा पुराणों में मिलता है। सामान्यतः नूपुर चांदी से निर्मित होते थे तथा उनमें छोटी-छोटी घंटियाँ लगी होती थीं, जिनकी मधुर ध्वनि को शुभ और मंगलकारी माना जाता था।

नूपुर केवल सौंदर्य-वर्धन का साधन नहीं था, बल्कि यह सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व भी रखता था। विवाह तथा अन्य मांगलिक अवसरों पर महिलाओं द्वारा पायल धारण करना शुभ माना जाता था। भारतीय नृत्य परंपराओं में भी नूपुर का विशेष स्थान है। भरतनाट्यम, कथक और ओडिसी जैसी नृत्य शैलियों में पायल की ध्वनि लय और ताल का महत्वपूर्ण भाग मानी जाती है। प्राचीन मूर्तियों और चित्रों में नूपुरों का विस्तृत चित्रण उनकी लोकप्रियता को दर्शाता है।

अंगूठी एवं मुद्रिका: अंगूठियाँ और मुद्रिकाएँ प्राचीन भारतीय समाज में प्रतिष्ठा, अधिकार और सामाजिक स्थिति के महत्वपूर्ण प्रतीक थीं। इन्हें स्वर्ण, रजत, कांस्य तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित किया जाता था। राजाओं, अधिकारियों और उच्च वर्ग के लोगों द्वारा विशेष प्रकार की मुद्रिकाओं का उपयोग किया जाता था, जिन पर राजचिह्न या विशेष प्रतीक अंकित रहते थे।

मुद्रिकाओं का उपयोग केवल आभूषण के रूप में ही नहीं, बल्कि प्रशासनिक और राजकीय कार्यों में भी किया जाता था। महत्वपूर्ण दस्तावेजों और आदेशों को प्रमाणित करने के लिए मुद्रिकाओं का प्रयोग किया जाता था। रामायण में भगवान राम द्वारा हनुमान को दी गई मुद्रिका का उल्लेख इस परंपरा के महत्व को दर्शाता है।

मुकुट एवं सिराभूषण: मुकुट और विभिन्न प्रकार के सिराभूषण प्राचीन भारतीय समाज में सत्ता, प्रतिष्ठा और दिव्यता के प्रतीक माने जाते थे। राजाओं, रानियों, राजकुमारों तथा धार्मिक व्यक्तित्वों द्वारा मुकुट धारण किया जाता था। स्वर्ण, रत्न, मोती और बहुमूल्य धातुओं से निर्मित मुकुट राजकीय वैभव और शक्ति का प्रदर्शन करते थे। भारतीय मूर्तिकला और चित्रकला में विभिन्न प्रकार के मुकुटों का सुंदर चित्रण मिलता है। देवताओं और देवियों की मूर्तियों में मुकुट उनकी दिव्यता और आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक माना गया है। गुप्तकालीन कला में मुकुटों की भव्यता और कलात्मकता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सिराभूषणों का प्रयोग केवल राजपरिवारों तक सीमित नहीं था, बल्कि विभिन्न सामाजिक और धार्मिक अवसरों पर सामान्य लोगों द्वारा भी विशेष प्रकार के सिराभूषण धारण किए जाते थे।

अलंकारों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्व:

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का महत्व केवल शारीरिक सौंदर्य को बढ़ाने तक सीमित नहीं था, बल्कि वे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। अलंकार व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, आर्थिक सम्पन्नता, पारिवारिक प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक पहचान के प्रमुख संकेतक माने जाते थे। समाज में किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा और वर्ग-स्थिति का अनुमान उसके द्वारा धारण किए गए आभूषणों से लगाया जाता था। राजपरिवारों, सामंतों तथा उच्च वर्ग के लोगों द्वारा स्वर्ण, रजत और बहुमूल्य रत्नों से निर्मित अलंकार धारण किए जाते थे, जबकि सामान्य वर्ग अपनी आर्थिक क्षमता के अनुसार अन्य धातुओं अथवा स्थानीय सामग्रियों से निर्मित आभूषणों का उपयोग करता था।[6]

प्राचीन भारतीय जीवन में विवाह, यज्ञ, धार्मिक अनुष्ठान, उत्सव तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर विशेष प्रकार के अलंकारों का प्रयोग किया जाता था। महिलाओं के लिए आभूषण केवल श्रृंगार की वस्तु नहीं थे, बल्कि वे सौभाग्य, सम्मान, वैवाहिक स्थिति और पारिवारिक गौरव के प्रतीक भी थे। विवाहित महिलाओं द्वारा चूड़ियाँ, करधनी, नूपुर तथा मांग-संबंधी अलंकरण धारण करना शुभ माना जाता था। विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में भी अलंकारों को मंगल और समृद्धि का प्रतीक बताया गया है।

पुरुषों के लिए भी अलंकारों का विशेष महत्व था। राजा, योद्धा तथा उच्च पदाधिकारी मुकुट, बाजूबंद, हार और मुद्रिकाएँ धारण करते थे, जो उनके अधिकार, शक्ति और प्रतिष्ठा के प्रतीक माने जाते थे। युद्ध के समय भी कुछ विशेष प्रकार के अलंकार वीरता और सम्मान के चिह्न के रूप में उपयोग किए जाते थे। इस प्रकार अलंकार सामाजिक संरचना और वर्गीय विभाजन को भी अभिव्यक्त करते थे।

सांस्कृतिक दृष्टि से अलंकार भारतीय परंपराओं और लोकजीवन का अभिन्न अंग थे। विभिन्न क्षेत्रों में आभूषणों की शैली, निर्माण-पद्धति और स्वरूप में स्थानीय सांस्कृतिक विशेषताओं का प्रभाव दिखाई देता था। राजस्थान, गुजरात, दक्षिण भारत, बंगाल तथा बिहार जैसे क्षेत्रों में प्रचलित आभूषणों की बनावट और डिजाइन स्थानीय कला एवं परंपराओं की विशिष्ट पहचान प्रस्तुत करती थी। इससे स्पष्ट होता है कि अलंकार केवल व्यक्तिगत श्रृंगार नहीं थे, बल्कि वे क्षेत्रीय संस्कृति और सामाजिक जीवन के जीवंत प्रतीक भी थे।[7]

इसके अतिरिक्त अलंकार आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण थे। स्वर्ण और रजत के आभूषण धन-संचय तथा आर्थिक सुरक्षा का माध्यम माने जाते थे। विशेषकर महिलाओं के लिए आभूषण एक प्रकार की व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में कार्य करते थे। यही कारण है कि भारतीय समाज में आभूषणों को केवल सौंदर्य की वस्तु नहीं, बल्कि पारिवारिक धरोहर और आर्थिक संपत्ति के रूप में भी देखा जाता था।

प्राचीन भारतीय कला में अलंकारों का चित्रण:

प्राचीन भारतीय कला में अलंकारों का अत्यंत सुंदर और विस्तृत चित्रण मिलता है। भारतीय मूर्तिकला, चित्रकला तथा स्थापत्य कला के विभिन्न उदाहरणों में तत्कालीन समाज में प्रचलित आभूषणों और अलंकरण परंपराओं का स्पष्ट विवरण दिखाई देता है। सांची स्तूप, भरहुत स्तूप, अमरावती, मथुरा, अजंता और एलोरा की कलाकृतियाँ इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन स्थलों पर निर्मित मूर्तियों और चित्रों में स्त्री एवं पुरुषों को विविध प्रकार के हार, कुंडल, बाजूबंद, करधनी, मुकुट तथा अन्य अलंकारों से सुसज्जित दिखाया गया है।

अजंता की भित्तिचित्रों में राजपरिवारों, देवताओं तथा सामान्य जनजीवन का जो चित्रण मिलता है, उसमें आभूषणों की कलात्मकता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन चित्रों में महिलाओं के गले के हार, कानों के कुंडल, कमर की करधनी तथा पैरों के नूपुर अत्यंत सूक्ष्मता और सौंदर्य के साथ अंकित किए गए हैं। इससे तत्कालीन समाज की सौंदर्यप्रियता और शिल्पकला की उन्नत अवस्था का परिचय मिलता है।

गुप्तकाल को भारतीय कला का स्वर्णयुग कहा जाता है। इस काल की मूर्तियों में अलंकारों की कलात्मकता और परिष्कृत रूप अपने चरम पर दिखाई देता है। देवी-देवताओं, राजाओं और अभिजात वर्ग की मूर्तियों में विभिन्न प्रकार के रत्नजड़ित आभूषणों का चित्रण मिलता है, जो तत्कालीन शिल्पकारों की असाधारण प्रतिभा को दर्शाता है। भारतीय कला में अलंकारों का यह चित्रण केवल सौंदर्य के लिए नहीं था, बल्कि यह उस समय के सामाजिक जीवन, आर्थिक सम्पन्नता तथा सांस्कृतिक मूल्यों का भी महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

निष्कर्ष:

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी था। वे केवल श्रृंगार की वस्तुएँ नहीं थे, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सम्पन्नता, धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक पहचान तथा राजनीतिक शक्ति के प्रतीक भी थे। विभिन्न प्रकार के आभूषणों के माध्यम से भारतीय समाज की कलात्मक प्रतिभा, शिल्पकौशल तथा सांस्कृतिक समृद्धि का परिचय प्राप्त होता है। सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर गुप्तकाल तक अलंकारों की परंपरा निरंतर विकसित होती रही और भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनी रही।

अलंकारों ने न केवल व्यक्ति के सौंदर्य को निखारा, बल्कि सामाजिक संरचना, धार्मिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों को भी अभिव्यक्त किया। प्राचीन भारतीय कला, साहित्य और पुरातात्त्विक साक्ष्यों में वर्णित आभूषण तत्कालीन समाज की समृद्धि और सौंदर्यबोध के महत्वपूर्ण प्रमाण हैं। आज भी भारतीय समाज में अनेक पारंपरिक आभूषण प्रचलित हैं, जो हमारी सांस्कृतिक विरासत की निरंतरता को दर्शाते हैं। इस प्रकार प्राचीन भारतीय अलंकारों की परंपरा भारतीय सभ्यता की गौरवशाली सांस्कृतिक धरोहर के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. वासुदेव शरण अग्रवाल, *भारतीय कला*, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, 2012, पृ. 85, 112, 236।
2. ए.एल. बाशम, *अद्भुत भारत* (The Wonder That Was India), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 178-182।
3. रोमिला थापर, *प्राचीन भारत का इतिहास*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 214, 287।
4. आर.एस. शर्मा, *प्राचीन भारत में सामाजिक संरचना*, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2015, पृ. 168, 201।
5. डी.एन. झा, *प्राचीन भारत*, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, नई दिल्ली, 2016, पृ. 97, 143।
6. के.एम. मुंशी, *भारतीय संस्कृति का इतिहास*, भारतीय विद्या भवन, मुंबई, 2011, पृ. 154-160।